हिन्दी पत्रकारिता के मसीहा

गुप्त जी, गुड़ियानी और गुमनामी की पीर

हिन्दी पत्रकारिता के मसीहा

गुप्त जी, गुड़ियानी और गुमनामी की पीर

● सत्यवीर नाहड़िया

समदर्शी प्रकाशन
नव-सृजन के नवीन पृष्ठ...
335 देव नगर, मोदीपुरम, मेरठ, उत्तर प्रदेश-250001

इस पुस्तक का कोई भी अंश, लेखक की पूर्वानुमति के
बिना प्रयोग निषेध है।

शीर्षक	:	**हिन्दी पत्रकारिता के मसीहा** **गुप्त जी, गुड़ियानी और गुमनामी की पीर**
लेखक का नाम	:	सत्यवीर नाहड़िया
प्रकाशक	:	समदर्शी प्रकाशन
प्रकाशन का पता	:	335, देव नगर, मोदीपुरम मेरठ, उत्तर प्रदेश- 250001 मोबाइल नम्बर : 9599323508 Website: www.samdarshiprakashan.com Email: samdarshi.prakashan@gmail.com
संस्करण	:	प्रथम (अगस्त 2020)
मुद्रक	:	थोमसन प्रेस, ओखला फेज -1, दिल्ली
आईएसबीएन नम्बर	:	**978-81-947639-3-2**
आवरण एवं पोस्टर-कविताएँ	:	अमित 'मनोज'
सर्वाधिकार ©	:	सत्यवीर नाहड़िया

Hindi Patrakarita Ke Masiha Gupt Ji, Guriani Aur Gumnami Kee Peer '
By- Satyavir Naharia Rs 150/-

समर्पण

पं. हरिराम आर्य

श्री विजय सहगल

श्री श्यामसुंदर सिंहल

बाबू बालमुकुंद गुप्त स्मृति अभियान के प्रणेता,
प्रख्यात स्वतंत्रता सेनानी-लेखक पं. हरिराम आर्य
(कारोली, रेवाड़ी), दैनिक ट्रिब्यून के पूर्व संपादक
श्री विजय सहगल (चण्डीगढ़) तथा निष्काम
साहित्यसेवी श्री श्यामसुंदर सिंहल (रेवाड़ी)
के उक्त अभियान में प्रेरक योगदान एवं उनकी
पावन अनमोल
स्मृतियों को...

विशेष आभार

- दैनिक ट्रिब्यून, चण्डीगढ़
- दैनिक जनसत्ता, चण्डीगढ़
- दैनिक हरिभूमि, रोहतक
- दैनिक भास्कर, पानीपत
- दैनिक जागरण (सांझी), हिसार
- दैनिक अमर उजाला, रोहतक
- दैनिक पंजाब केसरी, जालंधर
- दैनिक पंजाब केसरी, नई दिल्ली
- दैनिक जनसंदेश, चण्डीगढ़
- पींग (साप्ताहिक), रोहतक
- दैनिक हिंदुस्तान, नई दिल्ली
- दैनिक नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली

- बाबूजी का भारतमित्र, नीरपुर, नारनौल
- हरिगंधा, पंचकूला
- देस हरियाणा, कुरुक्षेत्र
- शिक्षा सारथी, पंचकूला
- हरियाणा लाइव, गुरुग्राम
- महकता अहीरवाल, गुरुग्राम
- डैमोक्रेटिक वर्ल्ड, चण्डीगढ़

- रहटचाल (साप्ताहिक), रेवाड़ी
- दैनिक हरियाणा ज्योति (दैनिक सांध्य), रेवाड़ी
- दैनिक रणघोष, रेवाड़ी
- दैनिक हरियाणा रथ, रेवाड़ी
- हरियाणा एजूकेशन न्यूज़, झज्जर
- दैनिक हरियाणा प्रदीप, गुरुग्राम

(जिन्होंने विभिन्न अवसरों पर इन आलेखों को प्रमुखता से प्रकाशित किया)

अनुक्रम

भगीरथ प्रयास	9
एक शोधपरक विशिष्ट कृति	12
कोटि-कोटि आभार...	14

अध्याय-1

बाबू बालमुकुंद गुप्त : जीवनवृत्त	17
छात्र-जीवन के किस्से	23
सामाजिक सरोकारों के कवि	27
बाल-साहित्य की अनूठी धरोहर	32
कुशल-संपादक गुप्त जी	37
चुटीले व्यंग्यकार बाबूजी	41
राष्ट्रीयता के अग्रदूत	45
हिंदी पत्रकारिता के मसीहा	50
भावप्रधान अनुवादक	54
हिंदी भाषा के उन्नायक	56
चिंतनशील निबंधकार	60
हिंदी गद्य के जनक	63
नवजागरण के पुरोधा	66

सिद्धहस्त लेखक 69
भारतेंदु युग के सेनापति 72

अध्याय-2
बाबू जी की जन्मस्थली : 76
साहित्यिक तीर्थ है गुड़ियानी 76

अध्याय-3
गुमनामी की पीर 92

अध्याय-4
चित्रावली 104
परिषद् के कार्यक्रमों की झलकियाँ-1 110
परिषद् के कार्यक्रमों की झलकियाँ-2 111

संदर्भ सूची 112

राजकुमार सिंह,
संपादक, दैनिक ट्रिब्यून,
चंडीगढ़।

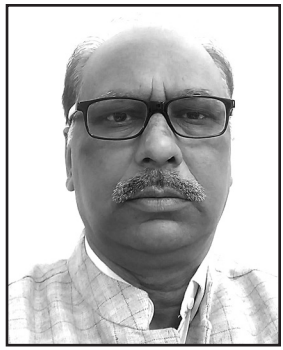

भगीरथ प्रयास

पृथक् राज्य के रूप में हरियाणा भले ही 1966 में अस्तित्व में आया, लेकिन हिंदी भाषा, साहित्य और पत्रकारिता की जड़ें यहां बहुत पुरानी और गहरी रही हैं। भौतिकता केंद्रित दौर में भाषा, साहित्य और पत्रकारिता की परिभाषा और प्रतिबद्धताएँ भी बदली हैं, पर हरियाणा की धरा पर जन्मे साहित्यकारों-पत्रकारों ने भारत भर में हिंदी का परचम तब लहराया, जब देश अंग्रेजी सत्ता की दासता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ था। कहना नहीं होगा कि तब स्व देश-समाज-संस्कृति की बात करना सत्ता के आक्रोश को आमंत्रित करना ही होता था। ध्यान रहे कि 1857 में स्वतंत्रता के लिए पहली क्रांति विफल हो चुकी थी, जिसके परिणामस्वरूप भारतीय समाज में आजादी के लिए बेचैनी बढ़ती जा रही थी तो अंग्रेजी सत्ता हर संभव दमन पर उतारू हो गई थी। उसी अग्निपरीक्षा काल में हरियाणा की धरा पर जन्मे जो हिंदीसेवी साहित्य और पत्रकारिता के क्षेत्र में कुंदन बन कर दमके, उनमें गुड़ियानी (रेवाड़ी) के बाबू बालमुकुंद गुप्त और कूंगड (भिवानी) के पंडित माधव प्रसाद मिश्र अग्रणी रहे।

यह वही दौर था, जब विदेशी दासता के दमघोंटू माहौल में हिंदी भाषा और साहित्य स्वदेश प्रेम की अलख जगाने का माध्यम बन रहे थे, तो पत्रकारिता भी निरंकुश सत्ता को आईना दिखाने के लिए मुखर हो रही थी। तब की हिंदी भाषा, साहित्य और पत्रकारिता को वर्तमान परिस्थितियों और स्वरूप के दृष्टिगत देखना एक बड़ी भूल होगी। मेरी बात कुछ लोगों को अच्छी नहीं भी लग सकती है,

लेकिन वास्तविकता यही है कि भाषा, साहित्य और पत्रकारिता, तीनों के सरोकार तब देश-समाज से गहरे जुड़े हुए थे। तब भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम मात्र नहीं थी, साहित्य सृजन भी स्वांतः सुखाय नहीं था, और पत्रकारिता आकर्षक, प्रभावशाली व्यवसाय भर नहीं थी।

इसीलिए हम पाते हैं कि बिना किसी व्यवस्थित प्रशिक्षण और जरूरी आधारभूत सुविधाओं के भी भाषा, साहित्य और पत्रकारिता के प्रति प्रतिबद्ध लोगों के सरोकार और तेवरों की धार बहुत तेज और असरदार थी। आज जब शहर-शहर पत्रकारिता प्रशिक्षण के बड़े-बड़े संस्थान खुल जाने के बाद भी देश-समाज के प्रति पत्रकारिता की प्रतिबद्धता पर चहुँओर चिंता नजर आती है, यह विश्वास कर पाना सहज नहीं होगा कि उन्नीसवीं शताब्दी के अंत और बीसवीं शताब्दी के आरंभ में जब पेशेवर शिक्षा और तकनीकी संसाधन-धन कुछ भी उपलब्ध नहीं था, तब बिना अधिक औपचारिक शिक्षा के ही स्वाध्याय और समर्पण के बल पर बाबू बालमुकुंद गुप्त ने हिंदी साहित्य और पत्रकारिता में अपनी प्रतिभा-क्षमता का परचम रेवाड़ी के गुड़ियानी गांव से ले कर मथुरा, लाहौर, कालाकांकर और कलकत्ता तक फहराया।

पारिवारिक परिस्थितियोंवश किशोरावस्था में ही औपचारिक शिक्षा अधूरी छोड़ कारोबार संभालनेवाले गुप्त जी ने साहित्य और पत्रकारिता, दोनों की शुरूआत उर्दू से की, लेकिन फिर हिंदी में जैसी रफ़्तार पकड़ी, वह किसी के भी लिए प्रेरक लक्ष्य हो सकती है। हिंदी और अंग्रेजी कैलेंडर के अनुसार बाबू बालमुकुंद गुप्त की जन्मतिथि को ले कर एक राय नहीं है, लेकिन 1865 में जन्मे गुप्त जी की पहली रचना उर्दू पत्र अवध पंच में 1884 में बीएम (बालमुकुंद) शाद के नाम से प्रकाशित हुई थी।

1888 में वह लाहौर से प्रकाशित उर्दू अखबार कोहेनूर के संपादक भी बने, लेकिन जब कई विद्वानों-संपादकों के आग्रह पर हिंदी में लिखना शुरू किया तो फिर मुड़ कर नहीं देखा। आज के तेज रफ्तार दौर में भी स्वनामधन्य संपादक-पत्रकारों के लिए यह विश्वास कर पाना सहज नहीं होगा कि तब के मुश्किल दौर में, महज 42 साल के जीवनकाल में बाबू बालमुकुंद गुप्त तीन बड़े हिंदी अखबारों- हिंदोस्थान, हिंदी बंगवासी और भारतमित्र के संपादक रहे। उनकी धारदार लेखनी के प्रशंसकों की संख्या लगातार बढ़ती गईं।

औपचारिक शिक्षा से वंचित होकर स्वाध्याय और समर्पण के बल पर ही पहले उर्दू और फिर हिंदी साहित्य-पत्रकारिता में अपनी अमिट छाप छोड़नेवाले बाबू बालमुकुंद गुप्त ने 18 नवंबर, 1907 को फतेहपुरी, दिल्ली की एक धर्मशाला मे अंतिम साँस ली।

महज 42 साल के जीवनकाल में साहित्य सृजन और पत्रकारिता के अलावा अनुवाद के क्षेत्र में भी उन्होंने कालजयी योगदान दिया। गुप्त जी ने मडेल भगिनी उपन्यास का बांगला से हिंदी में अनुवाद किया तो प्रताप नारायण मिश्र के नाटक सती प्रताप का उर्दू में। बांगला की चर्चित पुस्तक हरिदास का हिंदी-उर्दू में अनुवाद कर नाम कमाया तो रत्नावली का भी हिंदी अनुवाद किया। विषम परिस्थितियों में भी अल्प जीवनकाल में साहित्य और पत्रकारिता में ऐसा विराट योगदान दरअसल बाबू बालमुकुंद गुप्त की विलक्षण प्रतिभा-क्षमता का ही प्रमाण है। विडंबना यह है कि ऐसे विलक्षण व्यक्तित्व और उनके कृतित्व को जो पहचान, मान-सम्मान मिलना चाहिए था, वह देश-समाज नहीं दे पाया। देश-प्रदेश में सरकारें आती-जाती रहीं, लेकिन हिंदी साहित्य और पत्रकारिता के इस महान पुरोधा के गौरवशाली इतिहास से आनेवाली पीढ़ियों को परिचित-प्रेरित करवाना किसी की प्राथमिकताओं में नहीं रहा।

यह विडंबना सिर्फ हरियाणा की ही नहीं है, शेष भारत में भी ऐसे विलक्षण अराजनैतिक व्यक्तित्वों के प्रति सरकारों का ऐसा ही उपेक्षा भाव रहा है। सत्ता से गहरी निराशा के बीच समाज के स्तर पर समय-समय पर किए गए प्रयासों का ही यह परिणाम है कि बाबू बालमुकुंद गुप्त की जन्मस्थली गुड़ियानी से ले कर हरियाणा भर में उनकी स्मृतियों को संजोने का काम जारी है। इस पुनीत कार्य को समर्पित टीम के एक अग्रणी सदस्य सत्यवीर नाहड़िया की यह पुस्तक भी उसी दिशा में एक बड़ा प्रयास है।

हमें नहीं भूलना चाहिए कि अपने गौरवशाली अतीत, इतिहास से कट जानेवाले समाज का भी अंततः वही हश्र होता है, जो जड़ों से कट जाने के बाद किसी वृक्ष का। इसलिए सत्यवीर नाहड़िया समेत, गुप्त जी की गौरवशाली स्मृतियों को संजोने में जुटी पूरी टीम अपने भगीरथ प्रयासों के लिए बधाई और शुभकामनाओं की पात्र है।

20 जून, 2020

राजकुमार सिंह

(डॉ.) चंद्र त्रिखा,
निदेशक एवं उपाध्यक्ष
हरियाणा उर्दू अकादमी
निदेशक- हरियाणा साहित्य अकादमी,
पंचकूला (हरियाणा)

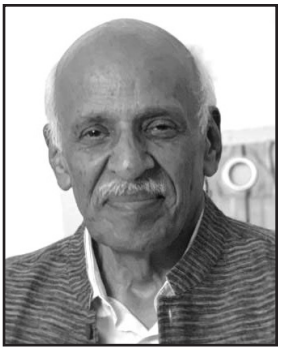

एक शोधपरक विशिष्ट कृति

भारतीय पत्रकारिता विशेष रूप से हिन्दी-पत्रकारिता को बाबू बालमुकुंद गुप्त की विशिष्ट देन के बारे में पाठ्य पुस्तकों में पढ़ा था, लेकिन इस बात की परिकल्पना तब नहीं थी कि इस महान कलम-योद्धा की गुड़ियानी गांव (रेवाड़ी) जन्मस्थली, साहित्यकारों के लिए एक दर्शनीय-स्थल का रूप ले लेगी।

कलम के इस मसीहा की स्मृतियों को राष्ट्रीय पटल पर उजागर करने में जिस अभियान दल ने पहलकदमी की थी, उसमें इस कृति के लेखक सत्यवीर नाहड़िया भी शामिल थे, जिन्होंने पूरे मनोयोग से पुस्तक रूप देकर प्रेरक कार्य किया।

उस पहलकदमी के बाद बाबू बाल मुकुंद गुप्त जी की जन्मस्थली पर वार्षिक आयोजन होने लगे। उनकी स्मृति में पुरस्कारों की स्थापना हुई। पत्र-पत्रिकाओं के विशेषांक निकले। अद्भुत घटना यह थी कि बाबू जी के सम्पादकत्व में निकलने वाले 'भारत-मित्र' को पुनर्जीवित करने के प्रयास भी हुए। साहित्य के इतिहास में ऐसा कभी नहीं हुआ। दूसरी बड़ी बात यह हुई कि अभियान दल के सभी सदस्यों ने इस महान शख्सियत पर कुछ न कुछ लिखा। इसी कड़ी में अभियान दल के ही एक अग्रणी सदस्य सत्यवीर नाहड़िया की यह कृति है।

सत्यवीर नाहड़िया, साहित्य जगत में, विशेष रूप से हरियाणवी साहित्य जगत में, एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। अब तक सैकड़ों लेख, हजारों कुंडलियाँ व दर्जनों विशिष्ट कृतियाँ दे चुके हैं। एक बहुमुखी प्रतिभा के धनी रचनाकार एवं स्तंभकार हैं, जो विभिन्न राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं के अलावा चंडीगढ़ से प्रकाशित

प्रतिष्ठित दैनिक समाचार-पत्र 'दैनिक ट्रिब्यून' में एक दशक से चर्चित दैनिक हरियाणवी काव्य स्तम्भ लिख रहे हैं।

गत अढ़ाई दशक से बाबू बालमुकुंद गुप्त की स्मृतियों एवं उपलब्धियों से निरंतर जुड़े हुए श्री नाहड़िया से वस्तुतः इस कृति की उम्मीद भी थी। ऐसा लगता था कि गुप्त जी की आत्मा इस पूरे अभियान के सभी सदस्यों में प्रवेश कर चुकी थी और सबको निरंतर कलम-साधना की ओर प्रेरित कर रही थी।

मुझे विश्वास है कि इस समर्पित कलमकार की इस विलक्षण कृति का भरपूर स्वागत होगा। यह शोधपरक भी है, प्रामाणिक भी और विश्लेषणात्मक भी। इस शोध परक लेखन को गुप्त स्मृति अभियान की निरंतरता में ही एक नवाचारी प्रकल्प के रूप में देखा जा सकता है, इसके लिए श्री नाहड़िया बधाई एवं साधुवाद के पात्र हैं।

2 अगस्त, 2020

(डॉ.) चंद्र त्रिखा

कोटि-कोटि आभार...

हरियाणा प्रदेश के रेवाड़ी जिले के गाँव गुड़ियानी में जन्मे यशस्वी साहित्यकार एवं मूर्धन्य पत्रकार स्व. बाबू बालमुकुंद गुप्त के भूले-बिसरे व्यक्तित्व एवं कृतित्व को चिरस्थायी एवं प्रेरणापुंज बनाने के गत अढ़ाई दशकीय राज्यस्तरीय अभियान की समर्पित टीम का एक कार्यकर्ता होने के कारण बहुत कुछ सीखने को मिला। सरकारों, संगठनों, साहित्यकारों, पत्रकारों, अख़बारों, पत्रिकाओं, आयोजनों को बेहद क़रीब से देखने का सौभाग्य मिला। खट्टे-मीठे और कुछ कड़वे अनुभवों के साथ यह यात्रा आज भी जारी है। समय की माँग के साथ इस यात्रा के प्रारूप भले बदलते रहे हों, किंतु गुप्त जी की अनमोल स्मृतियों एवं अनूठी उपलब्धियों को केंद्र में रखकर कार्य करना आज भी प्रतिबद्धता का अभिन्न अंग है। यह पुस्तक इसी प्रतिबद्धता का प्रतिफल है, जिसको मुख्य रूप से चार भागों में विभाजित किया गया है।

पुस्तक के प्रथम भाग में हिंदी पत्रकारिता के मसीहा तथा हिंदी गद्य के जनक के रूप में लब्धप्रतिष्ठ बाबू बालमुकुंद गुप्त जी के बहुआयामी व्यक्तित्व एवं कृतित्व को शामिल किया गया है, ताकि उनके समग्र जीवन एवं लेखन को आसानी से समझा जा सके।

पुस्तक के दूसरे भाग राष्ट्रीयता के अग्रदूत तथा क्रांतिकारी क़लमकार गुप्त जी की जन्मस्थली गाँव गुड़ियानी पर केंद्रित है, जिसमें उनसे जुड़ी अनमोल स्मृतियों के अलावा इस प्राचीन व ऐतिहासिक गाँव की विशेषताओं को रेखांकित करने का ईमानदार प्रयास किया गया है।

पुस्तक का तीसरा भाग हिंदी नवजागरण के पुरोधा गुप्त जी को क़रीब नौ दशकों तक सभी स्तरों पर भुलाए रखने की पीर के अलावा गत अढ़ाई दशक से उनके इस भूले-बिसरे पक्ष को चिरस्थायी एवं प्रेरणापुंज बनाने के संस्थागत अभियान का संस्मरणात्मक पक्ष है। अंतिम भाग चित्रावली के रूप में रखा गया है।

नब्बे के दशक से अभी तक गुप्त जी की पुण्यतिथि, जयंती या अन्य पड़ावों में राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में उन्हें तथा उनकी जन्मस्थली को केंद्र में रखकर सैकड़ों लेख, आलेख, फीचर, शोध पत्र आदि प्रमुखता से प्रकाशित हुए हैं। इस पुस्तक को उन सभी का सारांश भी कहा जा सकता है। उक्त स्मृति अभियान के दौरान पुस्तक मेलों, कवि सम्मेलनों, विचार गोष्ठियों आदि के सैंकड़ों, कार्यक्रमों में मुझे साहित्य एवं समाज के मूलभूत संस्कारों को सीखने का सौभाग्य मिला-इस पुस्तक के अंतिम खण्ड में संबंधित संस्मरणों में आप इसे महसूस करेंगे-ऐसा विश्वास है।

इस कृति की भूमिका लिखकर दो विद्वान कलमकारों ने इस शोधपरक लेखन का न केवल मूल्यांकन किया है, अपितु स्मृति अभियान का भावपूर्ण स्मरण भी किया है। दैनिक ट्रिब्यून के संपादक एवं देश के वरिष्ठ पत्रकार श्री राजकुमार सिंह तथा इस अभियान की प्रेरक अगुवाई करने वाले वरिष्ठ रचनाकार एवं हरियाणा साहित्य अकादमी के निदेशक डा. चंद्र त्रिखा जी का मैं कृतज्ञ हूँ। इन दोनों कलमकारो ने कोरोना के कठिन काल के बीच अपना कीमती समय पाण्डुलिपि के बहुआयामी मूल्यांकन में लगाकर मुझ पर उपकार किया है। इस कृति के लिए गुप्त जी की अनमोल कविताओं को पोस्टर के रूप में अलंकृत करने वाले केन्द्रीय विश्वविद्यालय पाली जाट (महेन्द्रगढ) के सहायक प्रोफेसर एवं युवा रचनाकार डॉ. अमित 'मनोज' का मैं आभारी हूँ, जिन्होंने कलात्मक आवरण के अलावा ये अनमोल पोस्टर कविताएँ भेंट कीं। प्रकाशन के क्षेत्र में नई राह गढ़ रहे साहित्य मर्मज्ञ योगेश समदर्शी जी के खुले दिलो-दिमाग व सहयोग के लिए धन्यवादी हूँ। परिषद् को प्रत्यक्ष-प्रोक्ष रूप से बहुमुखी सहयोग करने वाले तमाम ज्ञात-अज्ञात साहित्यसेवियों के प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ-खासकर वे, जिनका उल्लेख जाने-अनजाने में छूट गया हो। हिन्दी-मर्मज्ञ मेरे सहयोगी प्राध्यापक ईश्वर सिंह तथा श्री कैलाशचंद्र के रचनात्मक सहयोग का मैं आभारी हूँ।

इस अभियान के दौरान गुप्त जी के बहुआयामी व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर आधारित मेरी अनेक रचनाओं को स्वर देने वाले साधकों महाशय भीमसिंह,

संजय यादव, अजय शर्मा, डॉ. हरिप्रकाश यादव, डी.पी.ई. ईश्वर 'चाचा', प्रिय मुकेश सहित सैकड़ों विद्यार्थियों के कलात्मक योगदान को भला कैसे भुलाया जा सकता है? इस कृति के लिए आधार सामग्री बाबू बालमुकुंद गुप्त रचनावली, बाबू बालमुकुंद गुप्त निबंधावली के अलावा परिषद् की करीब आधा दर्जन पत्रिकाओं जिनमें स्मारिका के अलावा 'बाबू जी का भारतमित्र' तथा कुरुक्षेत्र से प्रकाशित पत्रिका 'देस हरियाणा' के बाबू बालमुकुंद गुप्त विशेषांक से ली गई है, जिसके लिए संबंधित संपादक मण्डलों का धन्यवादी हूँ। परिजनों, मित्रों तथा शुभचिंतकों के शुभाशीषों व शुभकामनाओं से ही कृति संभव हो पाई है, सभी का आत्मीय आभार...।

रविवार, 2अगस्त, 2020

-सत्यवीर नाहड़िया

अध्याय-1

बाबू बालमुकुंद गुप्त : जीवनवृत्त

दक्षिण हरियाणा का अहीरवाल क्षेत्र प्राचीनकाल से देश और दुनिया में अपने स्वर्णिम सैन्य इतिहास एवं अनूठी शहादत परम्परा के लिए चर्चित रहा है। यही कारण है कि यहाँ के सांस्कृतिक, साहित्यिक एवं सामाजिक सरोकारों में भी उक्त सैन्य संस्कारों एवं राष्ट्रीयता की भावभूमि को सहज ही देखा जा सकता है। अहीरवाल के रणबांकुरों ने अपने अदम्य साहस एवं बलिदान से राष्ट्रभक्ति के सदैव नए आयाम रचे हैं। प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में अंग्रेजों के ख़िलाफ़ मोर्चा खोलने में अग्रणी रहा अहीरवाल अपने अनूठे सैनिक इतिहास एवं वीरता के चलते अपनी अलग पहचान रखता है। इस वीर प्रसविनी धरा के चप्पे-चप्पे में

जाँबाज़ रणबाँकुरों एवं शहीदों की शहादत की मार्मिक कहानियाँ छिपी हैं। राष्ट्रीय एकता व अखण्डता के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने वाले अहीरवाल क्षेत्र में क़लम के माध्यम से आज़ादी एवं राष्ट्रीयता की अलख जगाने वाले साहित्यकारों, पत्रकारों, स्वतंत्रता-सेनानियों, संपादकों तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं ने भी राष्ट्रीय स्तर पर अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। ऐसे रचनाकारों में देशभर में एक नाम सदा सम्मान से लिया जाता रहा है। वह है- बाबू बालमुकुंद गुप्त, जिन्हें राष्ट्रीयता के अग्रदूत, हिंदी पत्रकारिता के मसीहा, हिंदी गद्य के जनक, भारतेंदु युग के सेनापति, हिंदी-उन्नायक, नवजागरण का पुरोधा, ओजस्वी कवि, सिद्धहस्त लेखक, कुशल संपादक, तटस्थ समीक्षक, सतर्क समालोचक, हिंदी परिमार्जक, भावपूर्ण अनुवादक, चिंतनशील निबंधकार, चुटीले व्यंग्यकार, हिंदी निर्माता तथा क्रांतिकारी स्वतंत्रता सेनानी के रूप में आज भी याद किया जाता है। ये अहीरवाल तथा हरियाणा की वीरभूमि के संस्कारों का प्रतिफल ही था कि इस माटी में जन्मे इस क़लमकार ने तत्कालीन पत्रकारिता के गढ़ कहे जाने वाले बनारस, लाहौर, कालाकांकर तथा कोलकाता में अपनी निर्भीक पत्रकारिता, कुशल संपादन तथा राष्ट्रवादी लेखन का लोहा मनवाया। आज हिंदी साहित्य, पत्रकारिता एवं भाषा के बारे में जब भी कहीं ज़िक्र होता है तो, अनायास बाबू बालमुकुंद गुप्त याद हो उठते हैं। आइए, उनके जीवनवृत्त से पहले उस दौर की थोड़ी पृष्ठभूमि भी जान लें, ताकि फिर उनके कार्यों व योगदान का महत्त्व सहजता से समझा जा सके।

गुप्त जी का दौर सत्तावन की क्रांति के बाद के बहुआयामी संक्रमण एवं पीड़ा का दौर था। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध तथा बीसवीं सदी का यह शुरूआती दौर गुप्त जी का रचनाकाल रहा है। यह वह दौर था जब प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की विफलता से भारतीय समाज बेहद आहत था, अंग्रेजी हुकूमत विद्रोह के रह-रहकर उठने वाली प्रत्यक्ष व परोक्ष आवाज़ों को कुचलने व दबाने में जुटी थी। यह वह दौर था जब गोरों की 'फूट डालो और राज करो' नीति नए कुचक्र एवं प्रपंच रचती जा रही थी। यही वह दौर था जब राजनैतिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक व सामाजिक स्तरों पर देश के कोने-कोने में आक्रोश था तथा इस आक्रोश की बहुआयामी प्रतिक्रियाओं को साम-दाम-दण्ड-भेद से गोरी हुकूमत कुचल रही थी।

दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि एक ओर सत्तावन की क्रांति के बाद यह भारतीय जनमानस के नवजागरण का दौर था, वहीं दूसरी ओर स्वाधीनता के

इस पहले आंदोलन से तिलमिलाए अंग्रेजों व अंग्रेजी शासन की ज्यादतियों का दौर था- गुप्त जी की रचनाधर्मिता का समय। अब इस दौर में ही तैयार होनी थी- सांस्कृतिक, साहित्यिक व सामाजिक नवजागरण की ज़मीन, जिस पर आज़ादी की नई लड़ाई एकजुटता से लड़ी जा सके, जिसमें राष्ट्रीय चेतना आवश्यक ही नहीं, अपितु अनिवार्य थी। यह दौर था देश को जाति-धर्म, लिंग-भेद, क्षेत्रवाद से ऊपर उठकर नए सिरे से एक सूत्र में बँधकर देश को गुलामी की बेडियों से आज़ाद कराना।

ऐसे दौर में जन्म लेकर वीरभूमि हरियाणा की वीरप्रसविनी धरा अहीरवाल के इस वीर क़लमकार ने क़लम के माध्यम से एक ओर आज़ादी की अनूठी अलख जगाए रखने और दूसरी ओर इसी दौरान हिंदी साहित्य, पत्रकारिता, भाषा एवं इतिहास के भाषायी एवं सांस्कृतिक आंदोलनों में अगवा की भूमिका निभाकर राष्ट्र के सच्चे सपूत होने का गौरव हासिल किया। उनकी रचनाधर्मिता जिस दौर में हुई, यह बेहद महत्त्वपूर्ण है। आइए, अब उनका जीवनवृत्त जानें।

बाबू बालमुकुंद गुप्त का जन्म विक्रमी संवत् 1922 की कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की चतुर्थी को हुआ, जो ज्योतिषीय कालगणना के मुताबिक 23 अक्तूबर, 1865 (सोमवार) पड़ता है, किंतु गुप्त जी के पौत्र हरिकृष्ण गुप्त (कोलकाता) उनकी जन्मतिथि 14 नवम्बर, 1865 बताते रहे हैं। तत्कालीन रोहतक एवं वर्तमान रेवाड़ी जिले के गाँव गुड़ियानी में जन्मे बालमुकुंद के परिवार को डीघलिया परिवार भी कहा जाता रहा है, क्योंकि इनके पुरखों का निकास गाँव डीघल (झज्जर) से रहा है। वे डीघल से बेरी, साल्हावास, कोसली होते हुए वर्तमान गाँव गुड़ियानी आए थे। गुड़ियानी के गोयल गौत्रीय लाला पूर्णमल के घर जन्मे बालक बालमुकुंद गुप्त की माता का नाम राधा देवी था। बख्शीराम वाले प्रतिष्ठित घराने में जन्मे बालमुकुंद के पिता लाला पूर्णमल के अलावा दादा गोवर्धनदास, परदादा हरसहायमल के साफ़गोई के संस्कार थे, तो उक्त ख़ानदान के दो चर्चित बड़ों नैनसुखदास व नारायणदास की विरासत व नाम मिलने का सौभाग्य भी नसीब हुआ। तीन बहनों व दो भाइयों के परिवार में बालमुकुंद ने विकट परिस्थितियों के चलते स्वयं परिवार को संभाला, भाई-बहनों को पढ़ाया तथा खुद भी पढ़े।

1875 में राकिम स्कूल में दाख़िला लेने वाले बालमुकुंद बचपन से ही कुशाग्र

बुद्धि के धनी थे। 15 वर्ष की आयु में एक सप्ताह के भीतर पहले पिता व फिर दादा के आकस्मिक असामयिक निधन के चलते बालमुकुंद को पढ़ाई छोड़कर पैतृक बही-खाते उठाने पड़े। बालमुकुंद की कुशाग्र बुद्धि का अंदाज़ा महज़ इस पहलू से लगाया जा सकता है कि पाँचवी कक्षा की परीक्षा में उस समय वे सियालकोट से होडल तक फैले महापंजाब में प्रथम स्थान पर आए थे। आगे न पढ़ाने की बात पर तथा उक्त करिश्मामयी परीक्षा परिणाम पर टिप्पणी करते हुए कोसली केंद्र पर तत्कालीन परीक्षा प्रभारी एसिस्टेंट इंस्पैक्टर लाला बलदेव सहाय ने कहा था,

'सूबा पंजाब के दस हज़ार लड़कों का इम्तिहान अब तक ले चुका हूँ, कोई लड़का इस जहानत और लियाकत का नहीं देखा। अगर आगे तालीम ना दिलाओगे, तो एक हक़तलफ़ी करोगे।' पारिवारिक परिस्थितियों के चलते बालमुकुंद ने आगे की शिक्षा स्वाध्याय से ही प्राप्त की।

वर्ष 1880 में उनका विवाह रेवाड़ी के प्रसिद्ध छाजूराज के ख़ानदान में गंगाप्रसाद की बेटी अनारदेवी से हुआ। स्वाध्याय के अलावा अवकाश के समय में बालमुकुंद ने अपनी पढ़ाई जारी रखी तथा मुंशी वजीर मुहम्मद खां से उर्दू की बारीकियाँ जानी तथा फिर उन्हीं की सलाह पर उर्दू के जाने-माने साहित्यकार मौहम्मद सितम जरीफ की अदबी संगत से साहित्य का बहुआयामी ज्ञान मिला। इस तरह उनकी ईश्वर प्रदत्त काव्य प्रतिभा को नए पंख मिले तथा तत्कालीन पत्र पत्रिकाओं में 'शाद' उपनाम से लिखने लगे।

बालमुकुंद 'शाद' की बजाय बीएम शाद के नाम से जब उनकी पहली रचना 1884 में उर्दू के तत्कालीन समाचार-पत्र 'अवध-पंच' में प्रमुखता से प्रकाशित हुई तो फिर उन्होंने पीछे मुड़कर नहीं देखा। इस तरह से बालकवि बालमुकुंद धीरे-धीरे सभी विधाओं में प्रमुखता से नाम कमाने लगे। इस दौरान उन्होंने झज्जर निवासी पं. दीनदयालु शर्मा के संपादन में प्रकाशित होने वाले उर्दू-पत्र 'मथुरा अख़बार' के लिए न केवल लेख लिखे, अपितु इसके संपादन में भी सहयोग किया। लाहौर से प्रकाशित होने वाले 'आज़ाद' में प्रकाशित लेख एवं कविताओं ने भी उन्हें खास पहचान दिलवाई।

इसी बीच दिल्ली के छात्रावास में रहते हुए उन्होंने मई, 1886 में मिडिल की परीक्षा दी तथा पाँचवीं के परीक्षा परिणाम की तरह अपनी प्रतिभा का लोहा

मनवाया। इस बार वे समूचे दिल्ली मण्डल में प्रथम रहे। अब उन्होंने पूरी तरह पत्रकारिता में पदार्पित होने का मन बना लिया तथा उत्तर प्रदेश के चुनार से प्रकाशित होने वाले उर्दू पत्र 'अख़बारे चुनार' से इस नई पारी की शुरूआत की। धीरे-धीरे उनकी लेखनी उर्दू पत्रकारिता का एक जाना-पहचाना नाम बनती चली गई। वर्ष 1888 के आखिरी माह में वे लाहौर से प्रकाशित होने वाले बेहद प्रसिद्ध उर्दू अख़बार 'कोहेनूर' के संपादक बने तथा उर्दू पत्रकारिता एवं साहित्य को अपनी मौलिकता के बूते पर नए आयाम दिए।

इस दौरान अनेक विद्वानों एवं सम्पादकों ने समय-समय पर प्रकाशित उनके लेखों एवं अन्य साहित्यिक रचनाओं के आधार पर उनसे हिंदी में भी लिखने का आग्रह किया, जिनमें झज्जर निवासी उनके गुरु तुल्य शुभचिंतक पं. दीनदयालु शर्मा तथा मेरठ के हिंदी विद्वान पं. गौरीदत्त शर्मा के नाम उल्लेखनीय हैं। फरवरी, 1889 भारत धर्म महामंडल दूसरे अधिवेशन में वृंदावन में उनकी मुलाकात पं. मदन मोहन मालवीय से हुई तथा वे उन्हें अपने पत्र 'हिंदोस्थान' में कालाकांकर के लिए आमंत्रण दे गए। उन्होंने 'कोहेनूर' को छोड़ा तथा पहले अपने गाँव गुड़ियानी से 'हिंदोस्थान' में बतौर संवाददाता रोहतक जिले के समाचार भेजने लगे तथा बाद में कालाकांकर जाकर 'हिंदोस्थान' के संपादन मण्डल में शामिल हो गए। इस तरह हिंदी में उन्होंने पहली कविता 'भैंस का स्वर्ग' लिखी और फिर लिखते ही चले गए। इस प्रकार उर्दू से पत्रकारिता एवं लेखन में पदार्पित हुए गुप्त जी ने हिंदी पत्रकारिता एवं साहित्य में निरंतर नवाचारी रचनाधर्मिता एवं प्रेरक प्रयोगधर्मिता के बूते पर अल्पकाल में ही अपनी अलग विशिष्ट मौलिक पहचान बना डाली। सरकार के ख़िलाफ़ अतिरिक्त सख्त लिखने के कारण उन्हें 'हिंदोस्थान' छोड़ना पड़ा। अस्वस्थता के चलते इस दौरान गाँव गुड़ियानी रहकर संस्कृत, अंग्रेजी व अरबी का न केवल ज्ञान बढ़ाया अपितु इस ज्ञान के आधार पर अनुवाद के क्षेत्र में खास काम किया, जिनमें 'मडेल भगिनी' नामक उपन्यास का बंगला से हिंदी में अनुवाद, प्रताप नारायण मिश्र के हिंदी नाटक 'सती प्रताप' का उर्दू में अनुवाद, बंगला में लिखी राजा राममोहन राय की जीवनी का उर्दू में अनुवाद आदि प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

वर्ष 1893 का नया साल उनके लिए नया सवेरा साबित हुआ, जब वे कोलकाता के आमंत्रण पर वहाँ 'हिंदी बंगवासी' में सह-संपादक बने। यहाँ से

उन्होंने संपादन एवं पत्रकारिता के साथ बहुआयामी लेखन को नई ऊंचाइयाँ प्रदान की। इसी दौरान उन्होंने बंगाल की चर्चित पुस्तक 'हरिदास' को हिंदी व उर्दू में अनुवादित कर नाम कमाया। इसी दौरान रत्नावली का हिंदी अनुवाद किया। अब 16 जनवरी, 1899 का वह ऐतिहासिक दिन आ ही गया, जब उन्होंने कोलकाता के 'भारतमित्र' के संपादक का कार्यभार अपनी प्रतिभा के बूते पर संभाला तथा शब्दों की टकसाल कहे जाने वाले 'भारतमित्र' में अपनी अंतिम साँस तक यादगार सेवाएँ देते हुए निर्भीक पत्रकारिता के नए कीर्तिमान स्थापित किए। 'शिवशंभु के चिट्ठे' सरीखे स्तंभ से तानाशाह लार्ड कर्जन तक को ललकारने वाले गुप्त जी ने नवजागरण की अनूठी अलख जगाई। इस दौरान कोलकाता में विशुद्धानंद सरस्वती विद्यालय की स्थापना में सहयोग, गांधी जी का आमने-सामने अलबर्ट हॉल में दक्षिण अफ्रीका पर भाषण सुनना, लार्ड-कर्जन के दिल्ली दरबार में 'भारतमित्र' के प्रतिनिधि के तौर पर शामिल होना, फिर इस दरबार के विरोध में मुखर होकर लिखना, अपनी कविताओं के संग्रह 'स्फुट कविता' को प्रकाशित करवाना, सावित्री कन्या पाठशाला में सहयोग करना, बंग-भंग के विरोध में आयोजित मातम दिवस में सक्रिय भागीदारी देना, निरंतर बंग-भंग के विरोध में आक्रामक लेखन जारी रखना आदि अनेक ऐसे पहलू हैं, जो उनकी क़लम के राष्ट्रीय-दायित्वों की प्रेरक मिसालें हैं। फिर वर्ष 1907 में अगस्त माह में बीमार हुए तो तबीयत बिगड़ती ही चली गई। 12 सितम्बर को गाँव लौटने के लिए ट्रेन पकड़ी, 14 सितम्बर को दिल्ली पहुँचे तथा यहाँ नवनिर्मित लक्ष्मीनारायण धर्मशाला में इलाज हेतु ठहर गए। 18 सितम्बर, 1907 को सायं 5 बजे आज़ादी का सपना आँखों में लिए राष्ट्रीयता का पक्षधर, पोषक एवं सजग प्रहरी, क़लम के मसीहा बाबू बालमुकुंद गुप्त ने इसी धर्मशाला में नश्वर देह को त्याग दिया। दिल्ली के निगमबोध घाट पर उनका अंतिम संस्कार किया गया। मात्र 42 वर्ष की आयु में गुप्त जी ने अपनी प्रखर बुद्धि एवं लेखनी से साहित्य, पत्रकारिता एवं भाषा के क्षेत्र में जो मानक व मापदंड स्थापित किए-उनके लिए वे युगों-युगों तक ससम्मान याद किए जाते रहेंगे।

पूरा पढ़ने के लिए अपनी प्रति आज ही खरीदें।